(जैनशासन) से मोक्षमार्ग बताकर इस संसार से पार उतारूँ' इस तरह वे जगत् के सभी जीवों के प्रति सर्वोत्कृष्ट करुणा भावना से भावित होते हैं। प्रत्येक क्षण उनकी यह भावना उत्तरोत्तर अत्यंत वृद्धि को प्राप्त होती है। सदा परार्थव्यसनी (= पर का कल्याण करने के व्यसन वाले) और करुणादि अनेक गुणों से युक्त वे जीव मात्र ऐसी भावना से भावित होकर बैठे नहीं रहते किंतु जिस प्रकार जीवों का कल्याण हो, वैसा प्रयत्न भी करते हैं। इसलिए वे तीर्थंकर नामकर्म का निकाचित बंध करते हैं।

मुख्यतया तीर्थंकर के भव से पूर्व के तीसरे भव में तीर्थंकर नामकर्म का बंध होता है और निकाचित होता है लेकिन कभी तीसरे भव से पहले के भवों में भी तीर्थंकर नामकर्म का बंध हो सकता है किंतु निकाचित नहीं होता, निकाचित तो तीसरे भव में ही होता है। अनिकाचित बंधा हुआ तीर्थंकर नामकर्म बिखर भी जाता है। सावद्याचार्य का शुद्ध प्ररूपणा से बंधा हुआ तीर्थंकर नामकर्म उत्सूत्र प्ररूपणा से बिखर गया था।

नीच गोत्र के आस्रव-

परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणाच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य।।६-२४।।

परनिंदा, आत्मप्रशंसा, सद्गुण-आच्छादन और असद्गुण-उद्भावन नीच गोत्र के आस्रव हैं।

(1) परनिन्दा - अन्य के विद्यमान या अविद्यमान दोषों को कुबुद्धि से प्रगट करना।

(2) आत्मप्रशंसा - स्व के विद्यमान या अविद्यमान गुणों को स्वोत्कर्ष साधने के लिए प्रगट करना।

(3) सद्गुणाच्छादन - पर के विद्यमान गुणों को ढाँकना अर्थात् प्रसंगवशात पर के गुणों को प्रकाश में लाने की आवश्कता होने पर भी ईर्ष्या आदि से नहीं लाना।

(4) असद्गुणोद्भावन - स्व में गुण न होने पर भी स्वोत्कर्ष साधने के लिए 'मुझमें गुण है' ऐसा दिखावा करना।

तदुपरांत - जाति आदि का मद, पर की अवज्ञा(तिरस्कार), दूसरे की हँसी-मजाक, धार्मिकजन का उपहास, मिथ्याकीर्ति प्राप्त करना, वडीलों का पराभव (अपमान) करना इत्यादि भी नीचगोत्र कर्म के आस्रव हैं।

उच्चगोत्र के आस्रव -

तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य।।६-२५।।

नीचगोत्र के आस्रवों से विपरीत कारण अर्थात् स्वनिंदा, परप्रशंसा, सद्गुणाच्छादन, असद्गुणोद्भावन तथा नम्रवृत्ति ओर अनुत्सेक, ये छह उच्चगोत्र कर्म के आस्रव हैं।

(1) स्वनिन्दा - स्वयं के दोषों को प्रगट करना।

(2) परप्रशंसा - पर के गुणों को प्रगट करना।

(3) सद्गुणाच्छादन - स्वोत्कर्ष से बचने के लिए स्वयं के विद्यमान गुणों को ढाँकना।

(4) असद्गुणोद्भावन - स्वयं के दुर्गुणो को प्रगट करना।

यद्यपि यहाँ स्वनिंदा असद्गुणोद्भावन का अर्थ समान है। तथापि स्वनिंदा का 'स्वयं की लघुता बताने, विद्यमान या अविद्यमान [1] स्वयं के दोषों को प्रगट करना 'ऐसा अर्थ करें और असद्गुणोद्भावन का' विद्यमान

[1] जैसे स्वोत्कर्ष से बचने के लिए विद्यमान स्वगुणों को छुपाना भी दोषरूप नहीं है किंतु गुणरूप है, वैसे स्वयं की लघुता बताने में स्वयं में अविद्यमान दोषों को कहना भी दोषरूप नहीं है किंतु गुणरूप है।